



**प्रकाशनीय**

इस कार्य में विद्युत् भारती, वायुपुं द्वारा जैन समाज विद्या के ज्ञान प्रदान के लिए आशिया पर्वतों का जैन वायु विद्या मण्डल, जिसमें लगभग २५४३ जैन-भारतियों के भाग लिया ।

इस परीक्षाका भी मकसद यह होना चाहिए कि जिससे  
जिसके प्रत्यक्ष फल में, मकसदों विद्यार्थियों के सामर्थ्यमें  
जो भी सम्बन्धित हो किन्तु इस विषय पर मकसदों  
के साथ ही ।

[illegible][illegible]

विद्यार्थियों के लिए महज न सुवीध होने के कारण उपयोगी हैं। आशा है, विद्यार्थी वन्धु अधिकधिक परीक्षा में बैठकर इस पुस्तक से लाभान्वित होंगे।

जेन विश्व भारती

लाटन

२०३५, चैत्र शुक्ला त्रयोदशी।

—श्रीचन्द्र रामपुरिया

कुलपति

## द्वितीय संस्करण

सन् १९७७ की भाँति इस वर्ष सन् १९७८ में भी जैन तत्त्व विद्या के ज्ञान-प्रदान हेतु तात्त्विक परीक्षा का क्रम जारी रहा। वर्ष १९७७ में २,५४३ छात्र-छात्राओं ने भाग लिया व इस वर्ष ५,४७७ छात्र-छात्राओं ने। इससे यह स्पष्ट है कि शिक्षार्थियों का उत्साह बढ़ा है। परीक्षा क्रम को स्थाई रूप देने की माँग समस्त केन्द्रों से प्राप्त हुई है।

परीक्षा क्रम को सुव्यवस्थित करने के लिए पाठ्यक्रम में आवश्यक परिवर्तन भी किए गये हैं।

आशा है विद्यार्थी-वन्धु अधिकधिक संख्या में परीक्षा में सम्मिलित होकर इस पुस्तक से लाभान्वित होंगे।

—कुलपति

# पञ्चदश

३५५

१. सप्तम भाग
२. सप्तम भाग
३. सप्तम भाग
४. सप्तम भाग
५. सप्तम भाग

सप्तम भाग १  
 " " २  
 " " ३  
 " " ४  
 " " ५

६. सप्तम भाग

१. सप्तम भाग
२. सप्तम भाग
३. सप्तम भाग
४. सप्तम भाग
५. सप्तम भाग
६. सप्तम भाग
७. सप्तम भाग
८. सप्तम भाग
९. सप्तम भाग
१०. सप्तम भाग

सप्तम भाग १  
 " " २  
 " " ३  
 " " ४  
 " " ५  
 " " ६  
 " " ७  
 " " ८  
 " " ९  
 " " १०

सप्तम भाग

१. सप्तम भाग
२. सप्तम भाग
३. सप्तम भाग
४. सप्तम भाग
५. सप्तम भाग
६. सप्तम भाग
७. सप्तम भाग
८. सप्तम भाग
९. सप्तम भाग
१०. सप्तम भाग

सप्तम भाग १  
 " " २  
 " " ३  
 " " ४  
 " " ५  
 " " ६  
 " " ७  
 " " ८  
 " " ९  
 " " १०

१८. पाशाचना  
१९. नेरापंग भी मर्मादाय  
२०. क्षमा-याचना

|          |   |
|----------|---|
| मुनि नथम | ३ |
| " "      | ४ |
| " "      | ५ |

### कथा-बोध

२१. मृत्युञ्जयी शानन्नापूत  
२२. ग्रहेंद्रक की प्रार्थना  
२३. मधुरवाणी  
२४. सरलता का परिणाम  
२५. धन अनर्थ का मूल है  
२६. अमर रहेगा धर्म हमारा  
२७. नीति-पद

|                     |    |
|---------------------|----|
| घानास्य श्री मुनिगी | ६  |
| " " "               | ७  |
| मुनि गुणलाल         | ७३ |
| " "                 | ७४ |
| मुनि नथमल           | ८० |
| " "                 | ८२ |
| संकलित              | ८५ |



जन विद्या  
( भाग-२ )



: १ :

## अर्हद्-वंदना

वंदना-भूष

हामी धरहंभास  
हामी मिहारा  
हामी धामरिवाज  
हामी उदरभावाज  
हामी सोए हाउमाहम

धरहंभास की सेवा नमस्कार हो ।  
मिहारा की सेवा नमस्कार हो ।  
धामरिवाज की सेवा नमस्कार हो ।  
उदरभावाज की सेवा नमस्कार हो ।  
सोए के सब आदमी की सेवा  
नमस्कार हो ।

हामी सब समुहवासी  
सब भावपरायणी ।  
संगसंग के साथेनि  
सबसे हकड मंजुषी ।  
है म बुद्धा अद्वैतज्ञा  
स बुद्धा महाभवा  
नी निनि परहृता  
आली सबसे ज्ञा

सब सब नमस्कार महाभवा  
सब सभी का विनाशक है,  
सोए सब मंजुषी के  
सबसे मंजुषी है ।  
मिहारा की बुद्ध (सीधे-बुद्ध) बुद्ध है,  
सोए मिहारा की बुद्ध, सब सबका  
परिहारा (परिहार) करण है,  
सोए मिहारा का साधारण है-बुद्धी ।

मोक्ष-भूष

है सुख के भी, सब-परिहारा  
है भी-  
सब सबकी सुख-  
सब-परिहारा ।

है सुख है सब-परिहारा है-  
है भी-  
सब सबकी सुख-  
सब-परिहारा ।

सब सबकी सुख-  
सब-परिहारा है  
है भी-  
सब सबकी सुख-  
सब-परिहारा ।





सत्यतो अयमसत्य  
सत्यं नयं

असत्यं नयं सत्यं नयं  
होय ॥

### साम्य-नूत

समया सम्य मुदाहरे  
मुली ॥

असमया मे समया मे यो नय ॥

सामासा मे मुदे मुदे  
जीविष्य मरते नहा ॥  
समो निश समसा  
नहा सादसासमासा ॥

सम साम-असम, मुदा-मुदा,  
जीविष्य-जीविष्य,  
निश-निश,  
सम समसा मे सम नय ॥

समिपिपिपि मुदे मुदे,  
समिपिपिपिपिपिपिपि ॥  
समो मरते मरते ॥  
असमो असमो नहा ॥

सम जीविष्य मुली मे समिपिपिपिपिपि,  
समिपिपिपिपिपिपिपिपिपिपिपिपि,  
असमो मे असमो मरते मरते  
नहा, असम असम-मिपिपिपिपिपिपि  
मिपिपिपिपिपिपिपिपिपिपिपिपिपि ॥

### साम्य-विशय-नूत

समया सम्य विदया मे  
मुदासा मे मुदासा मे ॥  
समया विदयाविदया मे  
मुदाविदया मुदाविदया ॥

समया मे मुदासा मे सम्य विदया मे  
सम्य विदया मे सम्य विदया मे ॥  
समया विदया मे सम्य विदया मे  
सम्य विदया मे सम्य विदया मे ॥

समया सम्य विदया मे  
समया मे मुदासा मे ॥  
समया सम्य विदया मे  
समया मे मुदासा मे ॥

समया मे सम्य विदया मे सम्य विदया मे  
समया मे सम्य विदया मे सम्य विदया मे  
समया मे सम्य विदया मे सम्य विदया मे  
समया मे सम्य विदया मे सम्य विदया मे ॥

१९. जो सहस्रसं सहस्राणं  
संगामे दुज्जए जिणो  
एगं जिणोज्ज श्रप्पाण  
एस से परमो जओ ॥

दुर्जय संग्राम में दस लाख  
योद्धाओं को जीतने वाले की श्रं  
जो अपने आपको जीत लेता है  
वह परम विजयी है ।

### मैत्री-सूत्र

२०. खामेमि सब्बजीवे  
सब्बे जीवा खमंतु मे ।  
मिस्सि मे सब्बभूएसु  
वेरं मज्झ न केण्ह ॥

मैं सब जीवों को क्षमा करता हूँ  
वे मुझे क्षमा करें ।  
मेरी मनुष्य मैत्री हो,  
किन्हीं से भी मेरा वैर न रहे ।

### मंगल-सूत्र

२१. अरहंता मंगलं  
मिद्धा मंगलं  
साधु मंगलं  
केवल्लि-पण्णलो मम्मो  
मंगलं  
अरहंता लोकायमा  
मिद्धा योग्गसमा  
साधु योग्गसमा

अरहंत मंगल हैं,  
मिद्ध मंगल हैं,  
साधु मंगल हैं,  
केवली-भागिन भर्मा मंगल हैं ।  
अरहंत लोक में उत्तम हैं,  
मिद्ध लोक में उत्तम हैं,  
साधु संन्यास हैं,

## बदना

भावभीनी बदना। गलतान्तर भक्तों में प्रभाव ।  
 सुख उल्लेखित विरहान्तर, रूप बदने का प्रभाव ।  
 भाव में निज की निरति, प्रति में निज की निरति ।  
 गलतान्तर की बदना में, गलत भक्तों प्रभावान्तर ।  
 भाव में गलतान्तर भक्तों, निज भक्तों में गलत की ।  
 निज भाव गलतान्तरान्तर, निज भाव भक्तों प्रभाव ।  
 निज की प्रभाव निज की प्रभाव, भक्त की भक्तों प्रभाव ।  
 निज भाव भक्तों भक्तों की, भक्तान्तरान्तर की भक्तों प्रभाव ।  
 भाव में गलतान्तर भक्तों, भक्तों भक्तों प्रभावान्तर ।  
 भक्तान्तरान्तर की भक्तों प्रभाव, भक्तों भक्तों प्रभाव ।  
 भक्तान्तरान्तर की भक्तों प्रभाव, भक्तों भक्तों प्रभाव ।

: २ :

## कालू तत्त्व शतक

### पहला वर्ग

१. राशि के दो प्रकार हैं :—

१. जीव राशि                      १. अजीव राशि

२. जीव के दो प्रकार हैं :—

१. सिद्ध                      २. संसारी

३. संसारी जीव के दो-दो प्रकार हैं :—

१. व्यवहार राशि,                      २. अव्यवहार राशि ।

१. भव्य,                      २. अभव्य ।

१. अस,                      २. स्थावर ।

१. सूक्ष्म,                      २. वादर ।

१. पर्याप्ता,                      २. अपर्याप्ता ।

४. जीव के तीन-तीन प्रकार हैं :—

१. स्त्री,                      २. पुरुष,                      ३. नपुंसक ।

१. असंयमी,                      २. संयमासंयमी,                      ३. संयमी ।

१. संज्ञी,                      २. असंज्ञी,                      ३. नो संज्ञी-नो असंज्ञी

५. जीव के चार प्रकार हैं :—

१. नारक                      २. तिर्यञ्च                      ३. मनुष्य                      ४. देव ।

६. जीव के पांच प्रकार हैं :—

१. एकेन्द्रिय                      २. द्वीन्द्रिय                      ३. त्रीन्द्रिय

४. चतुरिन्द्रिय                      ५. पञ्चेन्द्रिय ।



आने-दिग व सो पापार :

१. नीला

२. लाल

१४. प्राण के दस प्रकार हैं :

१. ओर्नेन्द्रिय प्राण

२. मनोः

३. अक्षिन्द्रिय प्राण

४. श्रोत्रोः

५. हासोन्द्रिय प्राण

६. कण्ठोः

७. रसोन्द्रिय प्राण

८. जालोन्द्रिय प्राण

९. स्पर्शोन्द्रिय प्राण

१०. आपुण्य प्राण

१५. आत्मा के तीन प्रकार हैं :

१. बहिरात्मा (शरीरदर्शी)

२. परमात्मा (परमदर्शी)

३. अन्तरात्मा (आत्मदर्शी)

१६. आत्मा के आठ प्रकार हैं—

१. द्रव्य आत्मा

५. ज्ञान आत्मा

२. कषाय आत्मा

६. दर्शन आत्मा

३. योग आत्मा

७. चारित्र्य आत्मा

४. उपयोग आत्मा

८. वीर्य आत्मा

१७. कषाय के सोलह प्रकार हैं :—

अनन्तानुबन्धी—क्रोध, मान, माया, लोभ ।

अप्रत्याख्यान — क्रोध, मान, माया, लोभ ।

प्रत्याख्यान — क्रोध, मान, माया, लोभ ।

संज्वलन— क्रोध, मान, माया, लोभ ।

१८. कषाय के सोलह उदाहरण हैं :—

अनन्तानुबन्धी क्रोध— पत्थर की रेखा के समान,

मान— पत्थर के स्तम्भ के समान,

माया— वांस की जड़ के समान,

लोभ— कृमि रेशम के रंग के समान ।

|                      |                                  |
|----------------------|----------------------------------|
| समस्तवाक्यात्मक शोध— | भूमि की रक्षा के समान,           |
| मान—                 | अग्नि के ज्वलन के समान,          |
| माया—                | मेढों के सींग के समान,           |
| शोध—                 | शोध के रंग के समान ।             |
| समस्तवाक्यात्मक शोध— | मान की रक्षा के समान,            |
| मान—                 | काष्ठ के ज्वलन के समान,          |
| माया—                | जलते अंग के मूल की माया के समान, |
| शोध—                 | माही के लज्जन के समान ।          |
| समस्तवाक्यात्मक शोध— | जल की रक्षा के समान,             |
| मान—                 | जल के ज्वलन के समान,             |
| माया—                | जलते हुए अंग की माया के समान,    |
| शोध—                 | हृन्दी के रंग के समान ।          |

१६. कानून के दृष्टि वाले अभिधान के चार प्रकार हैं :—

१. समस्तवाक्यात्मक कानून से सम्बन्ध का अभिधान,
२. समस्तवाक्यात्मक कानून से देशजन का अभिधान,
३. समस्तवाक्यात्मक कानून से महाजन का अभिधान,
४. समस्तवाक्यात्मक कानून से समस्तवाक्यात्मक अग्नि का अभिधान ।

१७. कानून के चार प्रकार हैं—

- |          |          |          |
|----------|----------|----------|
| १. कानून | २. अग्नि | ३. अग्नि |
| ४. अग्नि | ५. अग्नि | ६. अग्नि |
| ७. अग्नि | ८. अग्नि | ९. अग्नि |

१८. कानून के तीन प्रकार हैं—

- |          |          |          |
|----------|----------|----------|
| १. कानून | २. कानून | ३. कानून |
|----------|----------|----------|

कानून के चार प्रकार हैं—

- |          |          |
|----------|----------|
| १. कानून | २. कानून |
| ३. कानून | ४. कानून |













## अणुव्रत-गीत

वैदिकता की सु-मरिदा में, एक-एक मल मलान हो ।  
संन्यास ही सब हो ॥

अपने से सारा समुदाय, समुदाय की समिन्धता ।  
कभी, कभी या समुदाय में, मुक्त धर्म की मरदा ॥

सोते-सोते संन्यास में, मरदा समिन्धता हो ॥

वैदिकता ही सब हो, समिन्धता ही सब हो ।  
संन्यास, सम-मरिदा, समुदाय-संन्यास ही सब हो ॥

सुख सब हो, विद्वत्-संन्यास, सब सुख सब हो ॥

वैदिकता ही सब हो, समुदाय ही सब हो ।  
संन्यास ही सब हो, समिन्धता ही सब हो ॥

संन्यास ही सब हो, समिन्धता ही सब हो ॥

संन्यास ही सब हो, समिन्धता ही सब हो ॥

संन्यास ही सब हो, समिन्धता ही सब हो ॥

संन्यास ही सब हो, समिन्धता ही सब हो ॥







सिन्धु । ब्राह्मी को अठारह लिपियों का और सुन्दरी को गणित का अध्ययन कराना । पात्र, ओजार, वस्त्र, चित्र, आदि शिल्पों का प्रारम्भ हुआ । ऋषभ ने व्यापार का शिक्षण दिया । उन्होंने लम्बे समय तक राज्य किया । अन्त में अपने भी पुत्रों को अलग-अलग राज्यों का भार सौंपकर वे मुनि बन गए । उनके साथ चार हजार व्यक्ति दीक्षित हुए । एक हजार वर्ष की साधना करने के बाद उन्हें कैवल्य प्राप्त हुआ । तीर्थ की स्थापना कर वे उस युग के प्रथम तीर्थङ्कर हुए । उनके ६८ पुत्र ने उन्हीं के पास दीक्षा ग्रहण करली । भगवान् ऋषभ एक लाख पूर्व वर्षों तक साधुपन का पालन का निर्वाण को प्राप्त हो गए ।

भरत प्रथम चक्रवर्ती हुए । एक दिन वे अपने आदर्श-मन्दिर में बैठे-बैठे प्रेक्षा-ध्यान कर रहे थे । शरीर की प्रेक्षा चल रही थी । एकाग्रता बढ़ी । अनित्यता का स्पष्ट बोध हुआ । वहाँ बैठे-बैठे ही केवली हो गए ।

बाहुवलि ने अहं के कारण पिता ऋषभ के पास दीक्षा नहीं ली । वे स्वयं दीक्षित होकर एक वर्ष तक कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े रहे । अहं शेष था । अपनी बहिन साध्वियाँ ब्राह्मी और सुन्दरी के उपदेश से उनका अहं टूटा । वे केवली हो गए ।

माता मरुदेवा अपने पुत्र भगवान् ऋषभ के दर्शन करने हाथी पर चढ़ कर गईं । भगवान् समवसरण में विराजमान थे । मरुदेवा की भावना में उत्कृष्ट आया । वह हाथी पर बैठी-बैठी ही कैवल्य-ज्ञान प्राप्त कर मुक्त हो गईं ।

अन्तर्गत लोभ, क्रोध, मत्सर, ईर्ष्या, अहंकार

### प्रश्न

१. अन्तर्गत लोभ क्या है ? उसका अन्त किस काल-विभाग में हुआ ?
२. अन्तर्गत लोभ की प्रकृति को कौन-कौन सी विद्याएं विचारें ?
३. अन्तर्गत लोभ की प्रकृति-ज्ञान क्या और कैसे हुआ ?
४. अन्तर्गत लोभ होने पर भूत-प्रेत क्या बने ?
५. अन्तर्गत लोभ की प्रकृति-ज्ञान क्या मही हुआ ?

## भगवान् पार्श्वनाथ

विक्रम पूर्व आठवीं शताब्दी के लगभग भारतवर्ष के कोने-कोने में हठयोग का बोलबाला था। धर्म के नाम पर दम्भ की गहरी छत्र-छाया लग चुकी थी। लोग वास्तविक धर्म को छोड़ बाहरी दिखावे में डूब चुके थे। उन्हीं दिनों की बात है, बनारस के बगीचे में एक पञ्चाग्नि तप रहा था। वहाँ के राजकुमार पार्श्वनाथ टहलते-टहलते वहाँ आ पहुँचे, जहाँ पञ्चाग्नि तप के दर्शनार्थ एक बड़ी भीड़ जमा हो रही थी। राजकुमार ने अपने विशिष्ट ज्ञान (अवधि ज्ञान) से देखा कि घाँय-घाँय जलते हुए लकड़ों में से एक लकड़े की गोखाल में का एक जोड़ा तिलमिला रहा है। राजकुमार ने जनता और तपस्वी को सावधान करते हुए कहा कि ऐसी अज्ञान तपस्या तिलाञ्जलि दे दो। भला, यह भी कोई तपस्या है, जिसमें साँप रहे हों ? यह सुनते ही वह साधु चींका और राजकुमार की बात विगड़ गया। राजकुमार के सेवकों ने उस लकड़ को फाड़ा तो उभ्रलसा हुआ साँप का जोड़ा निकला। राजकुमार ने सर्व-सर्पिणी नमस्कार मन्त्र सुनाया और समभाव रखने का उपदेश दिया। उस राजकुमार के उपदेश को शिरोधार्य कर सद्भावना के साथ जल को समाप्त किया। दोनों मरकर असुरकुमार देवताओं के अधिना घरणेन्द्र और पद्मावती हुए। सारे लोग राजकुमार की प्रशंसा करते हुए अपने घर लौट आये। साधु मन ही मन राजकुमार पर कुछ उसकी एक भी न चली। लोगों की भी वैसे अज्ञान पूर्ण क्रियाकां



## जैन पर्व

पर्व अतीव के प्रतीक होते हैं। जेनों के मुख्य पर्व यथाशक्त पर्व पुरुषण, महावीर जयन्ती और दीपावली हैं।

१. अक्षय तृतीया (आषाढी) यह जेनों का ऐतिहासिक त्योहार है। इस दिन जेनों के पट्टिके दीर्घकाल भगवान् अक्षयभक्त एक वर्ष की नगम्या का पायना किया था। भगवान् कर्मयुग छोड़कर चर्मयुग की ओर मूँ। उन्होंने माधुवन ग्रहण किया। साधुओं का आचार-विचार कुछ नहीं जानने थे। भगवान् भिक्षा लिए घर-घर गये पर उन्हें रोटी दियी ने नहीं दी। वे स्वयं जाते नहीं थे।

इस प्रकार एक वर्ष बीत गया। अभी तक न तो साने रोटी मिली और न पीने को जल मिला। भगवान् विहार करते-करे अपने पौत्र सोमप्रभ की राजधानी हस्तिनापुर (वर्तमान दिल्ली) आ पहुँचे। वैसे ही घर-घर में भिक्षा के लिए गए। लोगों को बहपुं हुआ। कोई हाथी, कोई घोड़ा, कोई गहने और कोई कपड़े लाया। भगवान् ने कुछ भी स्वीकार नहीं किया। रोटी जैसी तुच्छ वस्तु भला जगत्-पिता को कौन भेंट करे ?

हस्तिनापुर के भव्य राज-प्रासाद में सम्राट् बाहुवलि पौत्र श्रेयांस कुमार महल के भरोखे में बैठा था। रात को उसने स्वप्न देखा। स्वप्न में उसने अपने हाथों से मेरु पर्वत को अमृत



महत्त्व और अधिक बढ़ गया और वह अक्षय तृतीया के नाम से प्रसिद्ध हो गई।

भगवान् ऋषभ कर्मयुग और वर्मयुग के प्रवर्तक थे। उनके तपः साधना के प्रति लोगों में गहरी आस्था है। उनके अनुयायी श्रावक-श्राविकाएँ सैकड़ों की संख्या में वार्षिक तपस्या करते हैं। भगवान् ऋषभ ने निरन्तर एक साल तक तपस्या की और वर्तमान में उसे एक साल तक एकान्तर तप (एक दिन के बाद एक दिन उपवास) के रूप में किया जा रहा है। इस तपस्या का समापन अत्यन्त उल्लासपूर्ण वातावरण में होता है। कुछ व्यक्ति इस दि 'शत्रुञ्जय' आदि जैन तीर्थ-स्थानों में जाकर तपस्या पूरी करते हैं। कुछ व्यक्ति अपने वर्माचार्यों की सन्निधि में इस क्रम को पूरा करते हैं।

२. पयुपण—पयुपण पर्व वर्म आराधना का पर्व है। भाद्रकृष्णा १२ या १३ से भाद्रशुक्ला ४ या ५ तक यह मनाया जाता है। इसमें तपस्या, स्वाध्याय, ध्यान आदि आत्म-शोधन की प्रवृत्ति की आराधना की जाती है। इस पर्व का अन्तिम दिन संवत्स कहलाता है। वर्ष भर की भूलों के लिए क्षमा लेना और क्षमा देना इसकी स्वयंभूत विशेषता है। यह पर्व मैत्री और उज्ज्वलता के संदेश-वाहक है।

दिगम्बर परम्परा में यही पर्व भाद्र शुक्ला पंचमी से चतुर्थी तक मनाया जाता है। इसमें प्रतिदिन क्षमा आदि दश धर्मों में एक-एक धर्म की आराधना की जाती है। इसलिए इसे दशलक्षण प कहा जाता है।

३. महावीर जयन्ती—चैत्र शुक्ला १३ को भगवान् महावीर के जन्म दिवस के उपलक्ष्य में मनाई जाती है।





## आचार्य श्री भारमलजी (१)

नेरान्ध के जिनोय गांवमें श्री भारमलजी का जन्म कि-  
संकर १८०३ मूला ग्राम (मिना ?) में हुआ था। आपके पिता का  
नाम किशनोजी न माना का नाम आर्यजी था। १० वर्ष की अवस्था  
में आपने अपने पिता के साथ स्थानकवासी सम्प्रदाय में भीखारी  
स्वामी के पास दीक्षा ग्रहण करली थी। आप महज, सरल, विनीत  
एवं हृदयवान् थे। आपका मृत्यु पर घटल विश्वास था। बचपन में  
ही आप उसके पक्षपाती थे। मृत्यु के सामने आप जीवन को नमन  
समझते थे। इसका ज्वलन्त प्रमाण हमें आपके सागर-प्रवेशन से  
मिलता है।

आचार्य श्री भीखणजी जब स्थानकवासी सम्प्रदास से पृथक् हुए  
तब भारमलजी स्वामी और उनके पिता किशनोजी भी आचार्य श्री  
के अनुगामी साधुओं में सम्मिलित थे। किशनोजी स्वभाव के क्रोधी  
थे। वे थोड़ी-थोड़ी बातों में ही गर्म हो जाते थे। इसलिए आचार्य श्री  
ने उन्हें अपने साथ दीक्षित करने से इन्कार कर दिया। किशनोजी ने  
कहा—यदि आप मुझे साथ न लेंगे तो मैं भारमल को भी आपके  
साथ न जाने दूंगा। स्वामीजी ने कहा—जो तुम्हारी इच्छा।  
किशनोजी ने भारमलजी स्वामी को अपने साथ चलने के लिए  
कहा। यद्यपि आचार्यश्री की सेवा से एक क्षण भी अलग रहने की  
उनकी इच्छा न थी, तो भी परिस्थिति ने उन्हें पिता के साथ चले

होने की आज्ञा कर दिया। उन्होंने सोचा था कि पिता की अनुमति के बिना राजर्षि की कदमे साध हीड़ान नहीं करेंगे, इसलिए ज्यों-ज्यों गैराजरी के साथ गुरुद्वारा हमनी अनुमति देना ही उचित है। प्रायः भट्ट उहें खीर पिता के साथ बसे गये। यही एक बड़ा हावरा उहरे। श्री विश्वरूपी की साध देवता, भारतावली गवासी बोले—प्रायः उहें राजर्षि भीड़गर्ज के साथ गढ़में ही अनुमति दें। मैं उनके साथ गुरुद्वारा भूत साधन का साधन करने, इसमें आशयसे बड़ा समर्थक हूँ।

एक दिन बीन गया। उन्होंने न तो कुल्ह खाया और न कुं पीया। दूसरे दिन पिता ने बीने ही आग्रह किया। उन्हें समझाने के तरह-तरह की चेष्टायें कीं, पर उस चतुर्दश वर्षीय बालक के निश्चय के सामने सब बेकार हुईं। आखिर पिता ने कहा—“पुत्र! यह क्या, तू मेरे साथ रहना तक नहीं चाहता?” भारमलजी स्वामी इसका उत्तर देते हुए कहा—“पिताजी! मैं आपके साथ रहने में नागम नहीं हूँ। मैंने तो आपके साथ ही दीक्षा ली थी और आज तक आपसे साथ ही रहता आया हूँ। पर अब मुझे एक ही लगन है कि जिस उद्देश्य से घर-बार छोड़ा, उस लक्ष्य तक पहुँच जाऊँ। इसीलिए आपसे इतना आग्रह करता हूँ कि आप मुझे आचार्य श्री के पास दीक्षित होने की आज्ञा दे दें।”

बालक के दृढ़ निश्चय के सामने पिता झुक गये और तीनों दिन उन्हें आचार्य भिक्षु को सौंप दिया। दो दिन की तपस्या के उनके हाथों पारणा हुआ और आपने आचार्य भिक्षु के साथ केतव (मेवाड़) में दीक्षा ग्रहण की।

## निर्भीकता

मुनिश्री भारमलजी वचनन मे बड़े निर्भीक मंत थे। एक बार की बात है, आचार्य भिक्षु का प्रथम चालुमार्ग केतवा की अन्धेरी ओरी में हुआ। रात्रि में परिष्ठापन करने के लिए मुनि भारमलजी बाहर गये। वापस आते समय मार्ग में एक गाँव उनके पांव में लिपट गया। शान्तभाव मे आप वहीं पड़े रह गये। श्रीगद् भिक्षु ग्वाभी की मालूम होने ही से बाहर आये। नवकार मन्त्र और मंगल पाठ का उच्चारण किया। सर्व तत्क्षण पांव छोड़कर चला गया। चौदह वर्ष की अल्प अवस्था में आपकी निर्भय वृत्ति आश्चर्यजनक थी।

### प्राप्त

१. आचार्यजी स्वामी ने आचार्य रामानुज वर्यो किया ?
२. आचार्य की आराधना में विराट्कोटी को काय में क्यों नहीं बना ?
३. आचार्य रामानुज का आचमन किसके द्वारा हो रहा ?
४. कलकत्ता जिला में कलकत्ता आचार्यजी स्वामी की पूजा क्या थी ?
५. आचार्य रामानुजजी का क्या बत कीर कहें हुए ?





तब सारे लड़के एक साथ कहते—‘धारे पातरे में घी—वैष्णो ठण्डो पाणी पी ।’

जयाचार्य ने बालकों को इस प्रकार खेलते कई बार देखा और उन्होंने उसे एक शुभ सूचना माना ।

### दीक्षा में बाधा

बालक मधराज का वैराग्य बढ़ता गया, परिवार पर दीक्षा की प्रार्थना करने का दबाव पड़ा । आखिर वन्नाजी के प्रार्थना कर पर युवाचार्य ने बालक मधराज को दीक्षा की आज्ञा प्रदान कर दी । दीक्षा की तिथि के दिन आपने अपने काका के साथ बैठकर भोज किया । उसके बाद तिलक करवाया, परिजनों से विदा ली और दीक्षा के लिए घर के बाहर खड़ी घोड़ी पर बैठकर जुलूस के साथ प्रस्थान कर दिया ।

उसी समय किसी व्यक्ति ने मधवागणी के काका को गलत बात कहकर बहका दिया । वे उसकी बातों में इतने बहकाए कि उन्होंने मन ही मन यह निर्णय कर लिया कि आज इसकी दीक्षा नहीं होने देगा ।

जुलूस ज्यों ही गढ़ के समीप पहुँचा कि वे सबको चीरते आगे बढ़े और किसी को कुछ कहने का मौका ही नहीं मिला । उन्होंने बालक मधराज को घोड़ी पर से नीच कर उतार लिया और मोदी में लेकर गढ़ में चुग गए । वैरागी मधराज ने जब काका से बहकावा का कारण पूछा तो काका ने क्रोध में एक ही जवाब दिया—‘मझे दीक्षा नहीं मिलायी है ।’ बाहर खड़ी घोड़ा भी चबित था । उन्होंने बहकाव को अपने अपने घर जाने के लिए कर दिया ।

नौगों ने इनको बहुत समझाया, परन्तु धार उधर पर क





कानूजी (रेलमगरा के) मे कोई गलती हो गई। मामला पंचों के सामने गया। जब निर्णय सुनाया जाने वाला था, तब मुनि काहू ने आचार्य श्री से प्रार्थना की कि मुझे निष्पक्ष न्याय मिल सके। ऐसी मुझे आशा नहीं है। जयाचार्य ने कारण पूछा—तुम्हें किस पर विश्वास है? क्या तुम्हें मधजी का निर्णय मान्य है? उन्होंने तत्काल स्वीकृति दे दी। उसी दिन से जयाचार्य ने मधराजजी को पाँच पंचों के ऊपर 'श्रीपंच' स्थापित कर दिया। उस समय मधवागणी की अवस्था १४, १५ वर्ष की थी। चौबीस वर्ष की अवस्था में आचार्य युवाचार्य स्थापित कर दिया गया।

### आचार्य काल

वि० सं० १९३८ भाद्रपद शुक्ला द्वितीया को जयपुर में आचार्य तेरापन्थ के आचार्य बने। उस समय आपकी अवस्था ४१ वर्ष की थी।

तेरापन्थ के आचार्यों में वे सबसे कोमल प्रकृति के आचार्य थे। वे दूसरों से कम से कम सेवा लेते थे। अनेक बार गर्मी की रात्रियों में जब वे पट्ट पर सोया करते थे तो गर्मी लगने पर स्वयं उठकर अपना बिछौना अपने हाथ से लेकर नीचे ही सो जाया करते थे। जब साधुओं को पता चलता तो वे नम्रता से निवेदन करते कि आपने हमको क्यों नहीं जगाया? मधवागणी उनको फरमाते कि तुम्हें नींद से जगाता उससे अच्छा यही था कि मैं स्वयं वहाँ जाकर सो गया। आप किसी को कड़ा उपालम्भ नहीं देते थे। किमी की गलती होने पर मधुर शब्दों में कहा करते—तुम गलती करने हो तब मुझे कहना पड़ता है। इस प्रकार मधवागणी का शासन काल बहुत ही शान्त रहा।



परन्तु उनका शासनकाल ४ वर्ष ७ मास का ही रहा। इसलिए अधिक देशाटन नहीं कर सके। उनके शरीर की अवस्था को देखकर एक दिन मन्त्री मुनि मगनलालजी स्वामी ने उनसे प्रार्थना की कि आप पीछे की व्यवस्था कर दें। परन्तु उनको यह विश्वास नहीं था कि वे इतने जल्दी चले जाएंगे। वे अपने पीछे किसी आचार्य की नियुक्ति नहीं कर सके। वि० सं० १६५४ कार्तिक कृष्ण ३ को सुजानगढ़ चातुर्मास में उनका अचानक स्वर्गवास हो गया। उनके आचार्य काल में ४० दीक्षाएँ हुईं, उनमें १५ साधु और २५ साध्वियाँ थीं।

### प्रश्न

१. माणकगढ़ी की दीक्षा कहाँ हुई ?
२. उनका शासन काल कितने वर्षों का रहा ?
३. उनका स्वर्गवास किस महीने में हुआ ?
४. उनके जीवन पर संक्षिप्त प्रकाश डालो।

# नी तत्त्व

मनुष्य का धर्म है—पशुधर्म, मनुष्यधर्म, पक्षीधर्म का स्वरूप । मनुष्य  
को है—

श्रीम, शर्मन, मुन्य, मता, मारुत, मंदर, मित्रेय, मनुष्य

१. श्रीम —श्रीमति धर्मना—श्रीमति श्री, श्रीमति व मुन्य-मुन्य  
मनुष्यधर्म करने की शक्ति हो, यह श्रीम है ।

२. शर्मन —श्रीमति धर्मना—श्रीमति श्री, श्रीमति व मुन्य-मुन्य  
मनुष्यधर्म करने की शक्ति, यह श्री, मनुष्यधर्म है ।

३. मुन्य —मुन्य धर्म, मुन्यधर्म की शक्ति कहते हैं ।

४. मता —मनुष्य धर्म, मनुष्यधर्म की शक्ति कहते हैं ।

५. मारुत —मनुष्य धर्म, मनुष्यधर्म की शक्ति कहते हैं ।

६. मंदर —मनुष्य धर्म, मनुष्यधर्म की शक्ति कहते हैं ।

७. मित्रेय —मनुष्य धर्म, मनुष्यधर्म की शक्ति कहते हैं ।

८. मनुष्य —मनुष्य धर्म, मनुष्यधर्म की शक्ति कहते हैं ।

९. श्रीमति —मनुष्य धर्म, मनुष्यधर्म की शक्ति कहते हैं ।

## प्रश्न

१. तत्त्व कितने हैं ? उनके नाम बताओ ।
  २. पुण्य का क्या अर्थ है ?
  ३. कर्म ग्रहण करने वाले जीव का परिणाम मोक्ष-सा तत्त्व है ?
  ४. जीव और अजीव में क्या अन्तर है ?
-

: १२ :

# नौ तत्त्व : एक विश्लेषण

(नौ तत्वों पर एक व्याख्यान)

श्रीमद् योगशास्त्र है। यही वह शास्त्र है। पूर्ण और  
विशाल है। जिसमें नौ तत्वों का वर्णन है। शास्त्र का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है। शास्त्र का वर्णन है।  
नौ तत्वों का वर्णन है। शास्त्र का वर्णन है।  
नौ तत्वों का वर्णन है। शास्त्र का वर्णन है।

श्रीमद् योगशास्त्र के दो भाग हैं। एक भाग में  
नौ तत्वों का वर्णन है। दूसरे भाग में नौ तत्वों का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है। नौ तत्वों का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है। नौ तत्वों का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है। नौ तत्वों का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है।

श्रीमद् योगशास्त्र के दो भाग हैं। एक भाग में  
नौ तत्वों का वर्णन है। दूसरे भाग में नौ तत्वों का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है। नौ तत्वों का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है। नौ तत्वों का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है। नौ तत्वों का  
वर्णन है। नौ तत्वों का वर्णन है।

## छः द्रव्य

जिसमें गुण और पर्याय दोनों होते हैं, उसे द्रव्य कहते हैं। गुण का अर्थ है सदा साथ में रहने वाला धर्म और पर्याय का अर्थ है—वदलने वाला धर्म। जैसे—जीव का गुण है ज्ञान और पर्याय है सुख-दुःख आदि।

द्रव्य छह हैं—वर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, काल, पुद्गलास्तिकाय और जीवास्तिकाय। अस्तिकाय का अर्थ है—प्रदेश समूह। पांच अस्तिकाय हैं। काल एक क्षण मात्र का होता है इसलिए वह अस्तिकाय नहीं होता।

### १. वर्मास्तिकाय

जीव और पुद्गल दोनों गतिशील हैं। उनकी गति में जो उदासीन भाव से सहयोग देता है उस द्रव्य को वर्मास्तिकाय कहते हैं। यह द्रव्य जीव और पुद्गल को गति नहीं कराता किन्तु जो गति करते हैं उनमें सहायक होता है; जैसे—पानी मछली को तैराता नहीं किन्तु उसके तैरने में सहयोगी बनता है। हम अंगूली हिलाते हैं, शरीर में रक्त का संचार होता है, यह सब इसी द्रव्य के माध्यम से होता है।

### २. अधर्मास्तिकाय

जो जीव और पुद्गल को ठहरने में सहयोग देता है उसे अधर्मास्तिकाय कहते हैं। चिलचिलाती धूप में पथिक जा रहा है। आश्रय की छाया देखकर वह बैठ जाता है, ठहर जाता है। छाया









## रूपी - अरूपी

शिक्षक—रमेश ! ऊपर क्या देखा गये हो ?

रमेश—आकाश देखा रहा हूं, गुरुजी !

शिक्षक—क्या आकाश को भी देख सकते हो ?

रमेश—हाँ, गुरुजी ! देखो यह नीला-नीला दीख रहा है न ?

शिक्षक—रमेश ! बताओ, क्या आकाश ऊपर ही है, नीचे नहीं ?

रमेश—क्यों नहीं ? वह सर्वत्र एक-सा फैला हुआ है। उसके बिना तो एक सूई की नोक भी नहीं टिक सकती।

शिक्षक—तो फिर तुम्हारी आँगुली के आस-पास भी वह होगा ?

रमेश—हाँ जरूर; वह तो है ही।

शिक्षक—क्या तुम्हें यह दीख रहा है ?

रमेश—नहीं, यह दीख तो नहीं रहा है। इसका क्या कारण है, गुरुजी ? आप ही बताइए, ऊपर का आकाश तो दीख रहा है और यहाँ नहीं दीखता है।

शिक्षक—रमेश ! तुम भूल रहे हो। यह जो नीला-नीला दीख रहा है, यह आकाश नहीं है। ये तो रज कण झकड़े हो रहे हैं, और दूरी के कारण नीले-नीले मिलते हुए से जान पड़ते हैं।

रमेश—तो क्या हम को आकाश दीख ही नहीं सकता ?

शिक्षक—नहीं, क्योंकि हम उन्हीं वस्तुओं को देख सकते हैं, जिनमें



प्रश्न—हे, गुण, धर्म की परीक्षा करने का धर्म है या नहीं ?

उत्तर—नहीं, परीक्षा किया जाता है, धर्म है, भले फिर वह किसी के लिए भी नहीं न की जाए।

प्रश्न—अन्य महापुरुषों की शिक्षा, शलोक, अज्ञान-पानन, लक्षणा आदि कर्मों से, यह धर्म है या नहीं ?

उत्तर—हे, पर्याप्त धर्म किसी सम्प्रदाय विशेष के लिए नहीं, उसका द्वार सबके लिए खुला है।

प्रश्न—क्या पद-द्विज शूद्र और म्लेच्छ भी धर्म करने के अधिकारी हैं ?

उत्तर—नहीं, उनमें भी चेतना है। वे भी शुद्ध आचरण का पालन कर सकते हैं।

प्रश्न—धर्म क्या है ?

उत्तर—‘आत्मशुद्धि साधनं धर्मः’—जिन उपायों से आत्मशुद्धि हो सके, उनको धर्म कहते हैं।

प्रश्न—वे उपाय कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—संवर और निर्जेरा, अर्थात् त्याग और तपस्या। इनके अनेक भेद हैं।

प्रश्न—क्या लौकिक धर्म और लोकोत्तर धर्म एक है ?

उत्तर—नहीं, दोनों भिन्न हैं।

प्रश्न—उनका स्वरूप क्या है ?

उत्तर—लौकिक धर्म है—सामाजिक-कर्तव्यों और लोक व्यवहारों का



## धर्म-स्थान

कमल हर रोज धर्म-स्थान—साधुओं के स्थान पर जाया करता था। एक दिन उसके पिता ने सोचा कि यह दिन में दो-चार बार साधुओं के यहाँ जाता है तो कुछ समझकर भी आता है या यों ही चक्कर काटता है, मुझे इसकी निगाह करनी चाहिए। दोपहर के समय पिता और पुत्र दोनों बैठे हुए थे। कमल की आँख बार-बार सामने दीवाल पर लटकती हुई घड़ी की सूई पर टिकती थी। पिता ने कहा—

‘कमल ! क्या कहीं जाने वाले हो ?’

‘हाँ पिताजी ! साधुओं की सेवा में जाने का समय होने वाला है।’

पिता ने कहा—‘तुम ! वहाँ बार-बार किसलिए जाते हो ?’

पुत्र—‘पिताजी ! वहाँ जाने का उद्देश्य क्या आपने धिया है ? वहाँ वे ही जाने हैं, जिन्हें कुछ न कुछ आत्मज्ञान पाना है। वहाँ जितना जाऊँ, उतना ही थोड़ा है। आत्मा एक ऐसा गूढ़ तत्व है, जिसका सहज पता तक नहीं चलता। उसके अगर्भी स्वरूप तक पहुँचने में अभी न जाने और कितने-कितने प्रयास करने होंगे ?’

पिता—‘वहाँ जाकर तुम लोग कुछ उधर-उधर की बातें भी करने होंगे ?’

पुत्र—‘नहीं, पिताजी ! मैं और मेरे साथी सब वहाँ जिस उद्देश्य से जाने हैं, उसी उद्देश्य को सफल करने में लग जाते हैं। प्रण...





: १८ :

## आशातना

विमल और निर्मल दोनों भाई साधुओं के दर्शन करने गये। विमल धर्म की असलियत को पहचानता था। निर्मल अभी तक सात वर्ष का ही था। आगे एक कमरे के दरवाजे पर एक कपड़ा तैनात किया हुआ था। निर्मल उसे लांघकर आगे जाने लगा, इतने में विमल बोला—“निर्मल ! ठहरो, आगे मत जाओ।”

निर्मल—क्यों ?

विमल—यह कपड़ा साधुओं का है और यहाँ पर रुकावट के लिये डाला गया है। इसको लांघने से आशातना लगती है।

निर्मल—आशातना किसे कहते हैं ?

विमल—गुरुओं के प्रति अनुचित वर्तन करने का नाम आशातना है।

निर्मल—तो क्या अन्दर जाना अनुचित है ?

विमल—नहीं, इसको लांघकर जाना अनुचित है।

निर्मल—उसके निवाय और भी आशातनाएँ हीती होंगी ?

विमल—हाँ, बहुत हैं।

निर्मल—कौन-कौन सी हैं ? मुझे बताओ।

विमल—साधुओं की ओर पीठ करके बैठना, बिना हाथ धोकर बैठना, बग़ावर बैठना, उमी तरह खड़ा रहना, बिना पूछे बीच में खोसना, व्याख्यान के बीच में खोसना, व्याख्यान के बीच में रुकना,



## लेखागण की मर्यादाएँ

[illegible]

देवेन्द्र— राजेन्द्र ! इसका प्रमत्ती कारण प्रत्यक्षता या दूर्यवस्था एवं अनुशासन की कमी है। जिस समाज में अच्छी व्यवस्था है, कुशल अनुशासन है वह आज भी इस बानावरण में कौनों दूर है।

राजेन्द्र—तेरा पन्थ माधु-संस्था की बातें सुनकर तुम्हें आश्चर्य होगा ! मैं करीब ४-५ वर्षों से उसके सम्पर्क में आया हूँ । उसका संगठन, पारस्परिक विशुद्ध प्रेम, कुशल अनुशासन, बड़ों का सम्मान, सबमें भाई-चारे का वर्तव्य आदि-आदि विनियम बातों की मुझ पर गहरी छाप पड़ी है । उसकी प्रत्येक व्यवस्था ने मुझे मन्त्र-मुग्ध बना दिया है । उसके द्वंद्वशील पूर्वाचार्यों की रची हुई नियमावली विनियम है । सुनो ! मैं तुम्हें कुछ ज्ञान-ज्ञास मयिदाएं बताता हूँ :







पूर्णिमा थी। यह पक्ष का अंतिम दिन था इसीलिए सब खमतखामणा कर रहे थे। इस तरह चार महीनों के बाद जो पक्खी आती है, वह "चौमासी पक्खी" कहलाती है।  
 - उस दिन समूचे वर्ष का सिंहावलोकन किया जाता है।

सोहन—पिताजी ! अगर कोई खमतखामणा न करे तो क्या होगा ?

पिता —सोहन ! खमतखामणा न करने से बड़ी हानि होती है। संवत्सरी के दिन भी कोई खमतखामणा न करे तो उसका सम्यक्त्व चला जाता है, इससे बढ़कर आत्मा का क्या ग्रहित हो सकता है ? बेटा ! खमतखामणा न करने से मन में गांठें बंध जाती हैं। जब तक वे नहीं खुलतीं तब तक व्यक्ति का मन बेचैन रहता है। उसमें शत्रुता का भाव बढ़ता जाता है।

सोहन—पिताजी ! कृपाकर बताइये कि 'खमतखामणा' कैसे करना चाहिए ?

पिता —जिनसे बैर-विरोध हैं, वे अगर सामने हों तो उनसे प्रत्यक्ष रूप से क्षमा मांग लेनी चाहिए और यदि सामने न हों तो मन ही मन उनको याद कर, मन से विरोध-भाव को हटा कर क्षमा-याचना कर लेनी चाहिए।

सोहन—पिताजी ! यह बहुत ही अच्छा क्रम है। इससे हम सबको बहुत ही लाभ पहुँच सकता है। परस्पर हमारी मित्रता बढ़ती है और हम एक दूसरे के निकट आ जाते हैं।

पिता —बेटा ! मैं तुम्हें एक पद सिखाता हूँ। इसे तुम सुबह और शाम दोनों वक्त बोल लिया करो।

सोहन—बताइये, वह कौन-सा पद है ?





: २१ :

## मृत्युञ्जयी थावच्चापुत्र

थावच्चा-पुत्र एक दिन अपनी अट्टालिका पर खड़ा था। उसके कानों में मधुर-मधुर गीत सुनाई दिए। वह उन्हें सुनता गया। उसे बड़ा अच्छा लगा। पर वह जान न सका कि गीत का भावार्थ क्या है और कहां से वह मधुर स्वर-लहरी आ रही है। वह अपनी माता के पास आया और सरलता से पूछने लगा, “माँ ! ये गीत कहाँ गाए जा रहे हैं ?”

माँ ने कहा - ‘बेटा ! पड़ोसी के घर पुत्र का जन्म हुआ है। उसकी खुशी में ये गीत गाए जा रहे हैं।’

‘अच्छा ! पुत्र उत्पन्न होने पर इतनी खुशी होती है ?’

‘हां, बेटा !’ माता ने कहा।

‘तो क्या मैं पैदा हुआ था तब भी इसी तरह गीत गाए गए थे ?’ थावच्चा पुत्र अपने वचन के स्वाभाविक भोलेपन के साथ पूछ बैठा।

माता ने कहा—‘बत्स ! जब तुम्हारा जन्म हुआ था तब एक दिन ही नहीं, कई दिन तक, इससे भी ज्यादा अच्छे गीत गाए गए थे। खुशियाँ मनाई गई थीं।’

“माँ ! मेरे कान उन गीतों को सुनने के लिए लालायित हैं।”

वह भागा, पुनः छत पर आया। ध्यान में गीत सुनने लगा। पर अब उन गीतों में वह मधुरता नहीं थी। कान उन्हें सुनना नहीं



हम सबके प्राण बच जाएंगे और तुम अपनी जिद्द पर अड़े रहोगे तो पोत के सारे यात्री मारे जाएंगे।”

अहंनक बड़ी मुसीबत में फंस गया। वह अपने साथियों को समझाने लगा—“धर्म को मैं कैसे छोड़ दूँ? मैंने धर्म को समझा है, फिर मैं दूसरे की शरण कैसे स्वीकार करूँ? मुझे इस बात का दुःख है कि मेरे कारण आप सब मुसीबत में फंस रहे हैं। मैं चाहता भी हूँ कि मेरे विचार का परिणाम मैं ही भुगतूँ। आप लोगों को नहीं भुगतना पड़े। पर धर्म को छोड़ मैं किसी दूसरे की शरण नहीं जा सकता।”

अहंनक की इस दृढ़ प्रतिज्ञा ने देव को विचलित कर दिया। वह अधीर हो उठा। उसने अहंनक का पोत आकाश में उठा लिया और बोला—“अहंनक! अब भी तुम मेरी बात मान लो, नहीं तो सब मारे जाएंगे।” अहंनक मौत के मुँह में जाकर भी विचलित नहीं हुआ। देव ने देखा और उसके अन्तःकरण में प्रविष्ट होकर देखा कि अहंनक अब भी वैसे ही अभय और धर्म निष्ठ है। देव का हृदय बदल गया। जलपोत समुद्र के तल पर जाकर टिक गया और देव अहंनक के चरणों में लुट गया। सब लोग इस दृश्य को आश्चर्यपूर्ण आँखों से देखते रहे।

जो व्यक्ति धर्म में दृढ़ रहता है उसे कोई भी शक्ति विचलित नहीं कर सकती इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म में दृढ़ रहना चाहिए।

### प्रश्न

१. देवता ने अहंनक को धर्म छोड़ने के लिए क्यों कहा?
२. अहंनक से यात्रियों ने क्या कहा?
३. अहंनक के दृढ़ रहने पर देवता ने क्या किया?



मधुर वचन से ही सब लोग प्रसन्न होते हैं, अतः हर एक को मधुर वाणी बोलनी चाहिए। भला, वचन में कंजूसी क्यों करनी चाहिए ?

शास्त्रों में कहा है—अन्धे को भी अन्धा नहीं कहना चाहिए। इससे उसको दुःख होता है और बोलने वाले की भी पहिचान हो जाती है। एक बार एक दुष्ट व्यक्ति, जो अपनी दुष्टता के लिए सर्वत्र प्रसिद्ध था, कहीं जा रहा था। रास्ते में उसे एक अन्धा आदमी मिल गया। उसने उससे कहा 'अन्धे बाबा, राम-राम।' अन्धे ने तत्काल कहा—'दुर्जन भाई ! राम-राम।' यह सुनते ही वह दङ्ग रह गया। इनमें से एक सज्जन पुरुष भी उधर से आ निकला। उसने कहा—'भूरदास बाबा, राम-राम।' अन्धे ने कहा—'सज्जन भाई, राम-राम।' अब तो दुष्ट पुरुष को बड़ा ही विस्मय हुआ। उसने अन्धे से पूछा—'क्यों भाई ! तुम तो अन्धे हो। तुम्हें क्या पता सामने वाला दुष्ट है या सज्जन ?' उसने कहा, यह तो बोली से ही पता लग जाता है। पुरुष की परीक्षा तो उसकी बोली ही है। वह ज्योंही बोलता है कि अन्तरात्मा का परिचय मिल जाता है।'

बहुत मारे बालक हँसो-मजाक में भी ऐसे वचन बोल देते हैं जिससे दूसरों का दिल दुखे। उन्हें दूसरों का दिल दुःखाने में ही आनन्द आता है पर उन्हें याद रखना चाहिए कि यदि वे किसी का दिल दुःखा सकने हैं, तो दूसरा भी उनका दिल दुःखा सकता है। इसीलिए भारतीय संस्कृति में प्रिय वचन को मन्थ-वचन के बराबर माना गया है और कहा गया है कि 'मन्थं ब्रूयान् प्रियं ब्रूयान् मा ब्रूयान् मन्थमप्रियम्—मन्थ बोलो और प्रिय बोलो, ऐसा मन्थ भी मन बोलो जो अप्रिय हो। हर वचन का हमारे मन में संस्कार बैठता है। यदि हम प्रिय बोलेंगे तो हमारे मन में अप्रिय संस्कार बैठेगे और यदि



व्यक्ति गाली दे और दूसरा न दे, तो अपने आप ही शान्त हो जाती है। आग तो वहीं लगती है जहाँ जलने जैसी कोई चीज हो। जहाँ जलने जैसी कोई चीज न हो, वहाँ कोई आग लगाये भी तो कैसे? इस प्रकार जब बुद्ध ने कुछ नहीं कहा तो भारद्वाज थोड़ा सा हतप्रभ हो गया। वह अपने आप में थकान अनुभव करने लगा और फिर जब उसने बुद्ध के मुखमण्डल पर मुस्कराहट की रेखाओं को पड़ा, तब तो उनसे प्रभावित हुए बिना न रहा।

उसे हर प्रकार से हतप्रभ देखकर बुद्ध बोले—क्यों भारद्वाज! यदि कोई किसी को कोई चीज उपहार में दे और लेने वाला उससे न ले तो वह वापस किसके पास जाती है? उनकी यह स्नेह-स्निग्ध वाणी सुनकर भारद्वाज के हाथ अपने आप जुड़ गये और कहने लगा—भगवान्, वह देने वाले के पास ही जाती है। फिर बुद्ध बोले—तुमने हमें इतनी गालियाँ दीं, पर हमने उनको स्वीकार नहीं किया। तब बोलो, वे वापस कहाँ जायेंगी? अब तो भारद्वाज बड़ा लज्जित हुआ। उसे अपनी गलती स्पष्ट महसूस होने लगी।

यदि कोई अप्रिय वचन कहे तो महान् आदमी उसे वापस कदु वचन नहीं कहता, क्योंकि वह जानता है कि गाली वही व्यक्ति देना है जिसमें पाप गालियों का खजाना भरा हुआ है। जिसके पास गाली है ही नहीं, वह गाली कैसे देगा? अतः अपने आपको महान् बनाने के लिए हमें मदा अप्रिय वचन से बचना चाहिये।

### प्रश्न

१. कोयल गायी क्यों लगती है?
२. वाणी का प्रयोग कैसे करना चाहिये?
३. भारद्वाज को क्या का पाप दनायें।









## धन अनर्थ का मूल है

दो भाई विदेश से धन कमाकर वापस आ रहे थे। धन एक नौली में जमा किया हुआ था। रास्ते में एक-एक दिन उस नौली को दोनों भाई रखते थे। एक रोज उन्होंने नदी के किनारे विश्राम किया। रात हो गई, वहीं पर दोनों सो गये। बड़े भाई के दिल में अकस्मात् एक विचार आया—आज नौली मेरे पास है। क्या ही अच्छा हो यदि मैं अपने छोटे भाई को नदी में बहा दूँ—समूचा धन मुझे मिल जायेगा, अन्यथा घर पर जाकर धन के दो हिस्से करने होंगे, मुझे आधा ही मिलेगा। ज्योंही वह भाई को मारने के लिए खड़ा हुआ, उसके विचार बदल गये। अपने आपको बिककारने लगा—अरे नीच ! तू आज धन का दास बन गया ? धन के लिए भाई को मारने तक मैं नहीं हिचकिचाया ! तेरी दृष्टि में भाई तूण के समान तुच्छ है और धन प्राण है ? क्या इस धन से तेरी तृष्णा बुझ जायेगी ? जो धन तेरे भाई का खून करवाता है, वह तेरे लिए कैसे सुखद होगा ? आखिर उसने यही निर्णय किया कि इस नौली को नदी में बहा दूँ, क्योंकि इसी से मैं ऐसा नीच बना। उमने वैसा ही किया।

प्रभान हुआ। छोटा भाई जगा। उसे पता चला कि नौली नदी में बहा दी गई। उसने बड़े भाई से उसके विषय में पूछा। भाई ने मारी बीती बात कह सुनाई। छोटा भाई बोला—आपने अच्छा किया। मेरे विचार भी आप जैसे हो थे। इस नौली को आज आप नदी में बहा देने तो कल जीवित नहीं रह पाते।



: २६ :

## अमर रहेगा धर्म हमारा

अमर रहेगा धर्म हमारा ।

जन-जन-मन अधिनायक प्यारा ,

विश्व-विपिन का एक उजारा ।

असहायों का एक सहारा ,

सब मिल यही नगाओ नारा ॥

अमर रहेगा..... ॥१॥

धर्म धरातल अतुल निराला,

सत्य अहिंसा-स्वरूप वाला ।

मैत्री का यह मधुमय प्याला ,

सत्पुरुषों ने सदा रूखारा ॥

अमर रहेगा..... ॥२॥

व्यक्ति-व्यक्ति में धर्म समाया ,

जाति-पाति का भेद मिटाया ।

निर्धन धनिक न अन्तर पाया ,

जिसने धारा जन्म सुधारा ॥

अमर रहेगा..... ॥३॥



धर्म नाम पर डटे रहेंगे,  
 सत्य शोध में सटे रहेंगे।  
 'तुलसी' सब कुछ स्वयं सहेंगे,  
 काटें कुटित् कर्म की कारा ॥  
 अमर रहेगा ..... ॥८॥

### प्रश्न

१. धर्म करने का अधिकार किसे है ?
२. आठम्वर व स्वार्थ-मिद्धि का धर्म में क्या स्थान है ?
३. "धर्म घरानल" से तुम क्या समझते हो ?
४. क्या धर्म भी समय के प्रभाव से बदल सकता है ?
५. 'अमर गान' के दो पद गुनाधो ।

---







